त्रिंशत्कोट्यस्तु सम्पूर्णाः संख्याताः संख्यया द्विज। सप्तषष्टिस्तथान्यानि नियुतानि महामुने ॥२०॥
विंशतिस्तु सहस्राणि कालोऽयमधिकं विना। मन्वन्तरस्य सङ्ख्येयं मानुषैर्वत्सरैर्द्विज ॥२१॥
चतुर्दशगुणो ह्येष कालो ब्राह्ममहः स्मृतम्। ब्राह्मो नैमित्तिको नाम तस्यान्ते प्रतिसञ्चरः ॥२२॥
तदा हि दह्यते सर्वं त्रैलोक्यं भूर्भुवादिकम्। जनं प्रयान्ति तापार्ता महर्लोकनिवासिनः ॥२३॥
एकार्णवे तु त्रैलोक्ये ब्रह्मा नारायणात्मकः। भोगिशय्यां गतः शेते त्रैलोक्यग्रासबृंहितः ॥२४॥
जनस्थैर्योगिभिर्देवैश्चिन्त्यमानोऽब्जसम्भवः। तत्प्रमाणां हि तां रात्रिं तदन्ते सृजते पुनः ॥२५॥
एवं तु ब्रह्मणो वर्षमेवं वर्षशतं च यत्। शतं हि तस्य वर्षाणां परमायुर्महात्मनः ॥२६॥
एकमस्य व्यतीतं तु परार्द्धं ब्रह्मणोऽनघ। तस्यान्तेऽभून्महाकल्पः पाद्म इत्यभिविश्रुतः ॥२७॥
द्वितीयस्य परार्द्धस्य वर्तमानस्य वै द्विज। वाराह इति कल्पोऽयं प्रथमः परिकीर्तितः ॥२८॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे प्रथमेंऽशे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

चौथा अध्याय

श्रीमैत्रेय उवाच

ब्रह्मा नारायणाख्योऽसौ कल्पादौ भगवान्यथा। ससर्ज सर्वभूतानि तदाचक्ष्व महामुने ॥१॥

है ॥१९॥ हे द्विज ! हे महामुने ! मनुष्यों के वर्ष गणना के अनुसार तीस करोड़, सड़सठ लाख और बीस हजार वर्ष का एक मन्वन्तर होता है, इससे अधिक का नहीं ॥२०-२१॥ इसके चौदह गुना बड़ा ब्रह्माजी का एक दिन होता है। उसके बाद नैमित्तिक प्रलय होता है। उसे ही ब्राह्म प्रतिसञ्चर (प्रलय) कहते हैं ॥२२॥ उस समय भूर्लोक, भुवर्लोक तथा स्वर्लोक ये तीनों लोक जलने लगते हैं, और महर्लोक में रहने वाले जीव उसकी ज्वाला से सन्तप्त होकर जनलोक में चले जाते हैं ॥२३॥ जब तीनों लोक जलमय हो जाते हैं, उस समय नारायणात्मक (नारायण ही जिनकी आत्मा हैं) ऐसे जनलोक निवासी ऋषियों तथा देवताओं से ध्यान किए जाने वाले कमलयोनि ब्रह्माजी त्रैलोक्य के ग्रास से तृप्त होकर अपने दिन के ही समान परिमाण वाली रात्रि में शेषशय्या पर शयन करते हैं। और उसके (रात्रि के) समाप्त हो जाने पर पुनः सृष्टि करते हैं ॥२५॥ इसी तरह (पक्ष, मास आदि) की गणना के अनुसार ब्रह्माजी का वर्ष होता है और उस वर्ष से एक सौ वर्ष की ब्रह्माजी की आयु होती है। इसे ही महात्मा ब्रह्माजी की परमायु कहते हैं ॥२६॥ हे अनघ ! ब्रह्माजी का एक परार्द्ध बीत चुका है। उसके अन्त में प्रख्यात पाद्म नामक महाकल्प हुआ था ॥२७॥ हे द्विज ! वर्तमान द्वितीय परार्द्ध का यह वाराहकल्प है। यह इस परार्द्ध का पहला कल्प है ॥२८॥

इस तरह विष्णु महापुराण के प्रथम अंश के तीसरे अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥३॥

ब्रह्माजी की उत्पत्ति, वराह भगवान् द्वारा पृथिवी का उद्धार तथा ब्रह्माजी द्वारा लोकों की रचना

श्रीमैत्रेयजी ने कहा— हे महामुने ! कल्प के प्रारम्भ में नारायण नामक भगवान् (ऐश्वर्य सम्पन्न) ब्रह्माजी ने, जिस तरह सम्पूर्ण भूतों की सृष्टि की उसे आप मुझे सुनायें ॥१॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** प्रजापतियों के स्वामी,

श्रीपराशर उवाच

प्रजाः ससर्ज भगवान्ब्रह्मा नारायणात्मकः। प्रजापतिपतिर्देवो यथा तन्मे निशामय ॥२॥
अतीतकल्पावसाने निशासुप्तोत्थितः प्रभुः। सत्त्वोद्रिक्तस्तथा ब्रह्मा शून्यं लोकमवैक्षत ॥३॥
नारायणः परोऽचिन्त्यः परेषामपि स प्रभुः। ब्रह्मस्वरूपी भगवाननादिः सर्वसम्भवः ॥४॥
इमं चोदाहरन्त्यत्र श्लोकं नारायणं प्रति। ब्रह्मस्वरूपिणं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ॥५॥
आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः। अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥६॥
तोयान्तःस्थां महीं ज्ञात्वा जगत्येकार्णवीकृते। अनुमानात्तदुद्धारं कर्तुकामः प्रजापतिः ॥७॥
अकरोत्स्वतनूमन्यां कल्पादिषु यथा पुरा। मत्स्यकूर्मादिकां तद्वद्वाराहं वपुरास्थितः ॥८॥
वेदयज्ञमयं रूपमशेषजगतः स्थितौ। स्थितः स्थिरात्मा सर्वात्मा परमात्मा प्रजापतिः ॥९॥
जनलोकगतैःसिद्धैस्सनकाद्यैरभिष्टुतः। प्रविवेश तदा तोयमात्माधारो धराधरः ॥१०॥
निरीक्ष्य तं तदा देवी पातालतलमागतम्। तुष्टाव प्रणता भूत्वा भक्तिनम्रा वसुन्धरा ॥११॥

पृथिव्युवाच

नमस्ते पुण्डरीकाक्ष शङ्खचक्रगदाधर। मामुद्धरास्मादद्य त्वं त्वत्तोऽहं पूर्वमुत्थिता ॥१२॥
त्वयाहमुद्धृता पूर्वं त्वन्मयाहं जनार्दन। तथान्यानि च भूतानि गगनादीन्यशेषतः ॥१३॥
नमस्ते परमात्मात्मन्पुरुषात्मन्नमोऽस्तु ते। प्रधानव्यक्तभूताय कालभूताय ते नमः ॥१४॥

नारायणात्मक भगवान् ब्रह्माजी ने जिस प्रकार प्रजाओं की सृष्टि की उसे मैं आपको सुनाता हूँ ॥२॥ अतीत कल्प के समाप्त हो जाने पर रात्रिभर सोकर उठे हुए, सत्त्वगुण के उद्रेक से युक्त जगत् के स्वामी ब्रह्माजी ने त्रैलोक्य को शून्य देखा ॥३॥ नारायण ही सर्वश्रेष्ठ तत्त्व हैं, अचिन्त्य हैं, ब्रह्मा, शिव आदि ईश्वरों के भी नियामक तथा स्वामी हैं। वे ब्रह्म स्वरूप हैं, अनादि हैं, और सबों के उत्पत्ति स्थान हैं ॥४॥ मनु आदि धर्मशास्त्रकार उन ब्रह्मस्वरूप, तथा जगत् की उत्पत्ति तथा लय स्थान दिव्यगुण सम्पन्न भगवान् नारायण के विषय में यह श्लोक कहते हैं ॥५॥ जल भगवान् नर (भगवान् पुरुषोत्तम) से उत्पन्न हैं, इसीलिए जल को नार कहते हैं। वह नार (जल) ही जिनका प्रथम आश्रय है, इसीलिए भगवान् को नारायण कहते हैं ॥६॥ सम्पूर्ण जगत् के जलमय हो जाने पर प्रजाओं के स्वामी ब्रह्माजी ने अनुमान से जान लिया कि पृथिवी जल के भीतर है। इसके बाद पृथिवी का उद्धार करने की इच्छा से, जैसे उन्होंने दूसरे कल्पों के प्रारम्भ में मत्स्य, कूर्म आदि रूपों को धारण किया था, उसी तरह से इस कल्प के प्रारम्भ में उन्होंने एक दूसरा वाराह का शरीर धारण कर लिया ॥७-८॥ यह शरीर वेद यज्ञमय था और सम्पूर्ण जगत् की स्थिति में संलग्न होकर सबों की अन्तरात्मा, प्रजाओं के स्वामी जनलोक में गये हुए सनकादि सिद्धों के द्वारा स्तुति किये जाकर पृथिवी को धारण करने वाले तथा अपने में ही स्थित (आत्माधार) परमात्मा जल के भीतर प्रवेश कर गये ॥९-१०॥ उसके पश्चात् पाताल में आये हुए उन वाराह भगवान् को देखकर भक्ति की भावना से भरकर भूदेवी अत्यन्त नम्र होकर उनकी स्तुति करने लगीं ॥११॥ **पृथिवी देवी ने कहा—** हे शंख, चक्र तथा गदा धारण करने वाले पुण्डरीकाक्ष (कमल के सदृश नेत्र वाले) भगवन्! आज आप इस पताल से मेरा उद्धार करें, पहले मैं आपसे ही उत्पन्न हुयी थी॥१२॥ हे जनार्दन! पहले भी आपने ही मेरा उद्धार किया था मैं तथा दूसरे आकाश आदि भूत भी पूर्णरूप से आपमय ही हैं। (अर्थात् इन सबों के उपादान तथा निमित्तकरण आप ही हैं) ॥१३॥ हे परमात्म स्वरूप! आपको नमस्कार है। हे पुरुषात्मन्! (पुरुषस्वरूप) आपको नमस्कार है। आप ही प्रधान (प्रकृति) तथा प्राकृत महदादि स्वरूप

त्वं कर्ता सर्वभूतानां त्वं पाता त्वं विनाशकृत्। सर्गादिषु प्रभो ब्रह्मविष्णुरुद्रात्मरूपधृक् ॥१५॥
सम्भक्षयित्वा सकलं जगत्येकार्णवीकृते। शेषे त्वमेव गोविन्द चिन्त्यमानो मनीषिभिः ॥१६॥
भवतो यत्परं तत्त्वं तन्न जानाति कश्चन। अवतारेषु यद्रूपं तदर्चन्ति दिवौकसः॥१७॥
त्वामाराध्य परं ब्रह्म याता मुक्तिं मुमुक्षवः। वासुदेवमनाराध्य को मोक्षं समवाप्स्यति ॥१८॥
यत्किञ्चिन्मनसा ग्राह्यं यद्ग्राह्यं चक्षुरादिभिः। बुद्ध्या च यत्परिच्छेद्यं तद्रूपमखिलं तव ॥१९॥
त्वन्मयाहं त्वदाधारा त्वत्सृष्टा त्वत्समाश्रया। माधवीमिति लोकोऽयमभिधत्ते ततो हि माम्॥२०॥
जयाखिलज्ञानमय जय स्थूलमयाव्यय। जयाऽनन्त जयाव्यक्त जय व्यक्तमय प्रभो ॥२१॥
परापरात्मन्विश्वात्मञ्जय यज्ञपतेऽनघ। त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कारस्त्वमोङ्कारस्त्वमग्नयः ॥२२॥
त्वं वेदास्त्वं तदङ्गानि त्वं यज्ञपुरुषो हरे। सूर्यादयो ग्रहास्तारा नक्षत्राण्यखिलं जगत् ॥२३॥
मूर्तामूर्तमदृश्यं च दृश्यं च पुरुषोत्तम। यच्चोक्तं यच्च नैवोक्तं मयात्र परमेश्वर।
तत्सर्वं त्वं नमस्तुभ्यं भूयो भूयो नमो नमः ॥२४॥

श्रीपराशर उवाच

एवं संस्तूयमानस्तु पृथव्या धरणीधरः। सामस्वरध्वनिः श्रीमाञ्जगर्ज परिघर्घरम् ॥२५॥
ततः समुत्क्षिप्य धरां स्वदंष्ट्रया महावराहः स्फुटपद्मलोचनः।
रसातलादुत्पलपत्रसन्निभः समुत्थितो नील इवाचलो महान् ॥२६॥

हैं तथा काल स्वरूप भी आप ही हैं। आपको नमस्कार है ॥१४॥ आप ही सम्पूर्ण भूतों की सृष्टि करने वाले, उनकी रक्षा करने वाले तथा उनका संहार करने वाले भी हैं। हे प्रभो ! सृष्टि आदि (पालन तथा संहार) की क्रियाओं में आप क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र का रूप धारण कर लेते हैं ॥१५॥ हे गोविन्द ! जिस समय (कल्प के अन्त में) सम्पूर्ण जगत् जलमय हो जाता है, उस समय आप ही सम्पूर्ण जगत् का भक्षण करके शेष शय्या पर शयन करते हैं, और मनीषीगण आपका ध्यान करते रहते हैं ॥१६॥ आपका जो परं तत्त्व (परवासुदेव रूप) है, उसको कोई नहीं जानता है। आपके जो राम कृष्णादि अवतारों के रूप हैं, उसी का पूजन द्युलोक में रहने वाले देवगण किया करते हैं ॥१७॥ आपकी ही आराधना करके मुमुक्षु (मोक्ष चाहने वाले) जीव मोक्ष प्राप्त कर लिए। भगवान् वासुदेव की आराधना किए बिना कौन मोक्ष प्राप्त कर पायेगा ?॥१८॥ मन के द्वारा जो कुछ गृहीत होता है, चक्षुरादि इन्द्रियों के द्वारा जो कुछ भी जाना जाता है, तथा बुद्धि के द्वारा जिन सबों का निश्चय किया जा सकता है, वह सब कुछ आपका ही रूप है ॥१९॥ मैं आपका स्वरूप हूँ, आप पर ही आश्रित हूँ, आपके द्वारा सृजित हूँ, तथा आपकी शरणागता हूँ। इसीलिए यह संसार मुझे माधवी कहता है ॥२०॥ हे सम्पूर्ण ज्ञान स्वरूप प्रभो ! आपकी जय हो, हे स्थूल स्वरूप प्रभो ! आपकी जय हो, हे अव्यय स्वरूप ! हे अनन्त ! हे अव्यक्त स्वरूप ! तथा हे व्यक्त स्वरूप प्रभो ! आपकी जय हो ॥२१॥ हे परापरात्मन् (उत्कृष्ट तथा निकृष्ट सभी प्रकार की वस्तुओं के आत्मा स्वरूप !) विश्वात्मन् ! (सम्पूर्ण जगत् के आत्मा स्वरूप !) आपकी जय हो; हे यज्ञों के स्वामिन् ! हे अनघ ! (सभी प्रकार के दोषों से रहित) आपकी जय हो। आप ही यज्ञ स्वरूप, वषट्कार स्वरूप, ओङ्कार स्वरूप तथा अग्नि स्वरूप हैं॥२२॥ हे हरे ! आप ही वेद स्वरूप, वेदाङ्ग स्वरूप हैं, तथा यज्ञ स्वरूप हैं। सूर्य आदि ग्रह, तारागण, नक्षत्रगण तथा सम्पूर्ण जगत् आप ही हैं ॥२२-२३॥ हे पुरुषोत्तम ! हे परमेश्वर ! मूर्त-अमूर्त, दृश्य-अदृश्य, जिन सबों को मैंने यहाँ कहा है तथा जिन सबों को मैंने नहीं कहा है, वह सब कुछ आप ही हैं। आपको बारम्बार नमस्कार है ॥२४॥

उत्तिष्ठता तेन मुखानिलाहतं तत्सम्भवाम्भो जनलोकसंश्रयान् ।
प्रक्षालयामास हि तान्महाद्युतीन् सनन्दनादीनपकल्मषान् मुनीन् ॥२७॥
प्रयान्ति तोयानि खुराग्रविक्षतरसातलेऽधः कृतशब्दसन्तति ।
श्वासानिलास्ताः परितः प्रयान्ति सिद्धा जने ये नियता वसन्ति ॥२८॥
उत्तिष्ठतस्तस्य जलार्द्रकुक्षेर्महावराहस्य महीं विगृह्य ।
विधुन्वतो वेदमयं शरीरं रोमान्तरस्था मुनयः स्तुवन्ति ॥२९॥
तं तुष्टुवुस्तोषपरीतचेतसो लोके जने ये निवसन्ति योगिनः ।
सनन्दनाद्या ह्यतिनम्रकन्धरा धराधरं धीरतरोद्धतेक्षणम् ॥३०॥
जयेश्वराणां परमेश केशव प्रभो गदाशङ्खधरासिचक्रधृक् ।
प्रसूतिनाशस्थितिहेतुरीश्वरस्त्वमेव नान्यत्परमं च यत्पदम् ॥३१॥
पादेषु वेदास्तव यूपदंष्ट्र दन्तेषु यज्ञाश्चितयश्च वक्त्रे ।
हुताशजिह्वोऽसि तनूरुहाणि दर्भाः प्रभो यज्ञपुमांस्त्वमेव ॥३२॥
विलोचने रात्र्यहनी महात्मन्सर्वाश्रयं ब्रह्म परं शिरस्ते ।
सूक्तान्यशेषाणि सटाकलापो घ्राणं समस्तानि हवींषि देव ॥३३॥
स्रुक्तुण्ड सामस्वरधीरनाद प्राग्वंशकायाखिलसत्रसन्धे ।
पूर्तेष्टधर्मश्रवणोऽसि देव सनातनात्मन्भगवन्प्रसीद ॥३४॥

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— पृथिवी देवी के द्वारा इस तरह से स्तुति किए जाने पर जिसमें सामस्वर की प्रधान रूप से ध्वनि थी इस प्रकार से धरणीधर श्रीमान् वाराह भगवान् ने घर्घर ध्वनि में गर्जना की ॥२५॥ उसके पश्चात् विकसित कमल के समान नेत्र वाले महावराह भगवान् ने अपने दाँतों पर पृथिवी को उठा लिया तथा नील कमल के समान श्याम तथा नीलाचल के समान विशालकाय वे रसातल से निकले ॥२६॥ निकलते समय उनके मुख के श्वास से उछलते हुए जल ने जनलोक में रहने वाले महाकान्ति सम्पन्न, निष्पाप, सनन्दन आदि मुनीश्वरों को धोकर पवित्र बना दिया ॥२७॥ उनके खुरों के अग्रभाग से प्रताडित होकर जल जोर से शब्द करता हुआ विदीर्ण रसातल में प्रवेश करने लगा और उनके श्वास वायु से विक्षिप्त होकर जनलोकवासी सिद्ध पुरुष चारो ओर भागने लगे ॥२८॥ पृथिवी को लेकर ऊपर की ओर जिस समय भगवान् अपने वेदमय शरीर को कँपाते हुए ऊपर निकले उस समय उनकी कुक्षि जल से भिंगी हुयी थी और उनकी रोमावली में स्थित मुनिगण उनकी स्तुति करने लगे ॥२९॥ निःशंकभाव से उन्नत दृष्टि वाले पृथिवी को धारण करने वाले भगवान् की, जनलोक में निवास करने वाले सनन्दनादि अत्यन्त नम्रतापूर्वक अपना शिर झुकाकर उनकी स्तुति किए ॥३०॥ हे ईश्वरों के परम ईश ! केशव गदा, शंख, खड्ग तथा चक्र धारण करने वाले प्रभो आपकी जय हो । आप ही जगत् की सृष्टि स्थिति तथा नाश के कारण हैं, आप ही ईश्वर हैं, और आपसे भिन्न परमपद नाम की कोई दूसरी वस्तु नहीं है ॥३१॥ हे यूप (यज्ञस्तम्भ) रूप दंष्ट्रा (दाढ़) वाले भगवन् आप ही यज्ञपुरुष हैं, आपके चारो पैरों में चारो वेद हैं, आपके दाँतों में यज्ञ हैं तथा मुख में (अग्निष्टोम आदि) चितियाँ हैं । हुताशन (यज्ञाग्नि) ही आपकी जिह्वा है, आपके रोम ही कुश हैं, और हे प्रभो! आप ही यज्ञपुरुष हैं ॥३२॥ हे महात्मन् ! रात और दिन ही आपके दोनों नेत्र हैं, सबों के आश्रयभूत ब्रह्मा आपके शिर हैं, वेदों के समस्त सूक्त आपके आयाल (सटाकलाप) हैं, हे देव ! सभी हविष्य आपके घ्राण हैं ॥३३॥

पदक्रमाक्रान्तभुवं भवन्तमादिस्थितं चाक्षर विश्वमूर्ते ।
विश्वस्य विद्मः परमेश्वरोऽसि प्रसीद नाथोऽसि परावरस्य ॥३५॥
दंष्ट्राग्रविन्यस्तमशेषमेतद्भूमण्डलं नाथ विभाव्यते ते ।
विगाहतः पद्मवनं विलग्नं सरोजिनीपत्रमिवोढपङ्कम् ॥३६॥
द्यावापृथिव्योरतुलप्रभाव यदन्तरं तद्वपुषा तवैव ।
व्याप्तं जगद्व्याप्तिसमर्थदीप्ते हिताय विश्वस्य विभो भव त्वम् ॥३७॥
परमार्थस्त्वमेवैको नान्योस्ति जगतः पते। तवैष महिमा येन व्याप्तमेतच्चराचरम् ॥३८॥
यदेतद् दृश्यते मूर्त्तमेतज्ज्ञानात्मनस्तव। भ्रान्तिज्ञानेन पश्यन्ति जगद्रूपमयोगिनः ॥३९॥
ज्ञानस्वरूपमखिलं जगदेतदबुद्धयः । अर्थस्वरूपं पश्यन्तो भ्राम्यन्ते मोहसम्प्लवे ॥४०॥
ये तु ज्ञानविदः शुद्धचेतसस्तेऽखिलं जगत्। ज्ञानात्मकं प्रपश्यन्ति त्वद्रूपं परमेश्वर॥४१॥
प्रसीद सर्व सर्वात्मन्भवाय जगतामिमाम्। उद्धरोर्वीममेयात्मञ्छन्नो देह्यब्जलोचन॥४२॥
सत्त्वोद्रिक्तोऽसि भगवन् गोविन्द पृथिवीमिमाम्। समुद्धर भवायेश शन्नो देह्यब्जलोचन॥४३॥
सर्गप्रवृत्तिर्भवतो जगतामुपकारिणी। भवत्वेषा नमस्तेऽस्तु शन्नो देह्यब्जलोचन ॥४४॥

हे प्रभो ! आपका तुण्ड (थुथुन) ही स्रुक् है, सामस्वर ही आपका धीरनाद है । प्राग्वंश (यजमान गृह) ही आपका शरीर है, सत्र ही आपके शरीर की सन्धियाँ हैं । हे देव ! इष्ट कर्म (यज्ञादि) तथा पूर्त (कूपादि खनन कर्म) ये दोनों आपके श्रोत्र हैं । हे सनातन स्वरूप भगवन्, आप प्रसन्न होइये ॥३४॥ हे अक्षर ! हे विश्वमूर्ते ! अपने एक ही डेग में पृथिवी को नाप लेने वाले आपको हम विश्व का आदि कारण समझते हैं आप ही परमेश्वर हैं, आप ही परावर समस्त तत्त्वों के नाथ (स्वामी) हैं । आप प्रसन्न हो जाइये ॥३५॥ हे नाथ ! आपके दाढ़ के अग्रभाग पर विराजमान यह समस्त भूमण्डल ऐसा प्रतीत होता है जैसे समस्त पद्मवन को रौंदने वाले गजराज के दाँतों में कीचड़ से सना हुआ कोई कमलपत्र लगा हो ॥३६॥ हे अतुलनीय प्रभाव वाले प्रभो ! पृथिवी तथा द्युलोक के बीच में जो अन्तराल है, वह आपके शरीर से व्याप्त हो गया है; हे विश्व को व्याप्त करने में समर्थ दीप्ति (तेज) से युक्त प्रभो ! आप सम्पूर्ण विश्व का कल्याण करें ॥३७॥ हे जगत्पते ! एकमात्र आप ही परमार्थ सत्य हैं, आपसे भिन्न कुछ परमार्थ नहीं है। यह आपकी ही महिमा है जिससे यह सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है । अतएव यह जगत् त्वदात्मक है ॥३८॥ यह जो जगत् दिखायी पड़ता है, उसमें ज्ञान स्वरूप आप आत्मा रूप से व्याप्त हैं । यह जगत् आपका मूर्त रूप है । अज्ञानी जीव भ्रान्त होने के कारण इस जगत् को केवल देव मनुष्य आदि रूप से देखते हैं ॥३९॥ यह सम्पूर्ण जगत् ज्ञान स्वरूप है, किन्तु अज्ञानी जीव इसको विषय रूप से देखने के कारण अज्ञान के सम्प्लवरूप जगत् में चक्कर काटते रहते हैं ॥४०॥ जो जीव परमात्मोपासना करने के कारण शुद्ध अन्तःकरण वाले हैं, तथा आत्मा को ज्ञान स्वरूप जानते हैं। हे परमेश्वर ! वे देव, मनुष्यात्मक सम्पूर्ण जगत् को ज्ञान स्वरूप तथा आपके शरीर रूप से जानते हैं।॥४१॥ हे सर्व! हे सर्वात्मन् ! (सम्पूर्ण जगत् के आत्मस्वरूप भगवन् !) आप सम्पूर्ण जगत् का कल्याण करने के लिए प्रसन्न हो जाइये; और हे अमेयात्मन् ! आप इस पृथिवी का उद्धार करें और हे कमलनयन ! हमलोगों को आप शान्ति प्रदान करें ॥४२॥ हे भगवन् ! हे गोविन्द ! हे ईश ! इस समय आप कल्याण करने के लिए उद्रिक्त सत्त्व गुण वाले हैं, आप इस पृथिवी का उद्धार करें और हमें कल्याण प्रदान करें ॥४३॥ हे भगवन् ! आपकी यह जगत् की सृष्टि करने में होने वाली प्रवृत्ति जगत् का उपकार करने वाली बन जाय । आपको नमस्कार है । हे कमलनयन ! आप हमलोगों

श्रीपराशर उवाच

एवं संस्तूयमानस्तु परमात्मा महीधरः। उज्जहार क्षितिं क्षिप्रं न्यस्तवांश्च महाम्भसि ॥४५॥
तस्योपरि जलौघस्य महती नौरिव स्थिता। विततत्वात्तु देहस्य न मही याति सम्प्लवम्॥४६॥
ततः क्षितिं समां कृत्वा पृथिव्यां सोऽचिनोद्गिरीन्। यथाविभागं भगवाननादिः परमेश्वरः ॥४७॥
प्राक्सर्गदग्धानखिलान्पर्वतान्पृथिवीतले। अमोघेन प्रभावेण ससर्जामोघवाञ्छितः ॥४८॥
भूविभागं ततः कृत्वा सप्तद्वीपान्यथातथम्। भूराद्यांश्चतुरो लोकान्पूर्ववत्समकल्पयत्॥४९॥
ब्रह्मरूपधरो देवस्ततोऽसौ रजसा वृतः। चकार सृष्टिं भगवांश्चतुर्वक्त्रधरो हरिः॥५०॥
निमित्तमात्रमेवाऽसौ सृज्यानां सर्गकर्मणि। प्रधानकारणीभूता यतो वै सृज्यशक्तयः ॥५१॥
निमित्तमात्रं मुक्त्वैवं नान्यत्किञ्चिदपेक्षते। नीयते तपतां श्रेष्ठ स्वशक्तया वस्तु वस्तुताम्॥५२॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे प्रथमेंऽशे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

पाँचवाँ अध्याय

श्रीमैत्रेय उवाच

यथा ससर्ज देवोऽसौ देवर्षिपितृदानवान्। मनुष्यतिर्यग्वृक्षादीन्भूव्योमसलिलौकसः ॥१॥

को शान्ति प्रदान करें ॥४४॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** इस प्रकार से स्तुति किए जाने पर पृथिवी को धारण करने वाले परमात्मा वराह भगवान् शीघ्रता से ऊपर लाये और उसे महार्णव के ऊपर स्थापित कर दिए।॥४५॥ उस जल समूह के ऊपर बड़ी नौका के समान स्थित यह पृथिवी आकार के विस्तृत होने के कारण उसमें डूबती नहीं है।॥४६॥ अनादि परमेश्वर भगवान् वराह ने उसके पश्चात् पृथिवी को समतल बनाकर उस पर जहाँ-तहाँ विभाग करके पर्वतों को स्थापित किया ॥४७॥ पूर्व कल्प के अन्त में दग्ध हो गये पर्वतों को सत्य सङ्कल्प वाले भगवान् ने अपने अमोघ प्रभाव से रच दिया ॥४८॥ उसके पश्चात् सप्त द्वीप आदि के क्रम से पृथिवी का विभाग करके श्रीभगवान् ने भू आदि (भुवः स्वः तथा महः) इन चारो लोकों को पहले कल्प के समान रच दिया ॥४९॥ उसके पश्चात् भगवान् श्रीहरि ने रजोगुण से युक्त होकर चार मुखों वाले ब्रह्माजी का रूप धारण करके सृष्टि की रचना की ॥५०॥ सृज्य पदार्थों की सृष्टि करने में परमात्मा तो निमित्त कारण ही है, क्योंकि सृष्टि के कार्य में प्रधान कारण तो सृज्य शक्तियाँ (जीवों के प्राचीन कर्मों की वासना) ही होती है ॥५१॥ अतएव हे तपस्वियों में श्रेष्ठ मैत्रेय ! सृष्टि में निमित्त कारण परमात्मा से भिन्न किसी दूसरी वस्तु की अपेक्षा नहीं होती है, क्योंकि जीव तो अपने प्राचीन कर्म के अनुसार ही देवादि शरीर को प्राप्त करते हैं ॥५२॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के प्रथम अंश के चौथे अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥४॥

पञ्च पर्वात्मक अविद्यासर्ग, षट्प्रकारक सर्ग, आदि विविध सर्गों का वर्णन

श्रीमैत्रेय महर्षि ने कहा— हे द्विज ! सृष्टि के प्रारम्भ में भगवान् ब्रह्माजी पृथिवी, आकाश तथा जल में